Opinion >

पवित्रता या छल? पुरुष का धर्म, स्त्री की बेड़ियां

भारत में स्त्री की बात होते ही चर्चा उसके शरीर पर आ टिकती है। यह बात जितनी आम प्रतीत होती है, उतनी ही भीतर तक झकझोरने वाली है। किसी सार्वजनिक व्यक्ति या धार्मिक गुरु की टिप्पणी विवाद खड़ा कर देती है, लेकिन उसके पीछे जो सोच है, वह विवाद से कहीं पुरानी है। यह वह सोच है जो स्त्री को केवल शरीर मानती है: एक ऐसा शरीर जिसे कोई और अपने स्वामित्व में रख सकता है, जिसका उपयोग किया जा सकता है, जिसे भोगा जा सकता है।

Written By: News24 हिंदी

Updated: Aug 6, 2025 22:19

Share :



आचार्य प्रशांत

---विज्ञापन---

आचार्य प्रशांत

भारत में स्त्री की बात होते ही चर्चा उसके शरीर पर आ टिकती है। यह बात जितनी आम प्रतीत होती है, उतनी ही भीतर तक झकझोरने वाली है। किसी सार्वजनिक व्यक्ति या धार्मिक गुरु की टिप्पणी विवाद खड़ा कर देती है, लेकिन उसके पीछे जो सोच है, वह विवाद से कहीं पुरानी है। यह वह सोच है जो स्त्री को केवल शरीर मानती है: एक ऐसा शरीर जिसे कोई और अपने स्वामित्व में रख सकता है, जिसका उपयोग किया जा सकता है, जिसे भोगा जा सकता है।

---विज्ञापन---

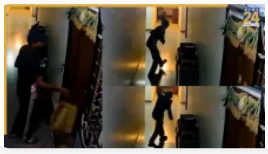
Powered By



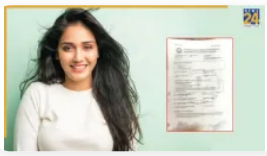
हाल ही में किसी ने कहा: अगर स्त्री की मांग में सिंदूर नहीं है, तो ज़मीन खाली समझो। यह सोच स्त्री को भूमि बनाकर देखती है और पुरुष को उसका स्वामी: जो उस पर हल चलाएगा, बीज बोएगा और निर्माण करेगा। यह

कोई अकेली बात नहीं, बल्कि उस परंपरा का हिस्सा है जिसमें स्त्री को जीवनभर किसी न किसी पुरुष की अधीनता में रखा गया: पहले पिता, फिर पति, और अंत में पुत्र। इतिहास में भी हम देखते हैं कि जब सेनाओं को इनाम दिया जाता था, तो ज़मीन, धन और स्त्रियाँ, तीनों ही बांटी जाती थीं।

टॉप न्यूज़



डिलीवरी बॉय, क्रिकेट बैट और वो Kiss... सोशल मीडिया पर इस वीडियो को देखकर क्यों भावुक हो रहे दुनिया भर के फैंस?



द्विशा शर्मा की पोस्टमार्टम रिपोर्ट में सामने आया मौत का सच! पुलिस ने किए कई चौंका देने वाले खुलासे



'देश में आर्थिक तूफान और पीएम बांट रहे टॉफी...', इटली में Melody गिफ्ट पर राहुल गांधी का तंज

लोक-धर्म और पितृसत्ता: साथ उभरी संरचनाएं

जब मनुष्य ने जंगल छोड़ा और खेत जोतने लगा, तो समाज की रचना बदल गई। खेती के लिए लगातार मेहनत चाहिए थी, और मशीनें या ईंधन न होने पर यह मेहनत शरीर से ही आती थी। स्त्रियां उस समय गर्भवती होती थीं, बच्चों को पालती थीं, और अक्सर लगातार प्रसव और पालन में लगी रहती थीं। गर्भनिरोधक नहीं थे, शिशु मृत्यु दर अधिक थी, और स्त्रियाँ घरेलू जीवन में बंधी हुई थीं। पुरुष अपेक्षाकृत मुक्त थे और उनके पास अधिक शारीरिक बल, जिससे वे खेतों और समाज दोनों में प्रभुत्व स्थापित करने लगे।

---विज्ञापन---

खेती ने अधिशेष और संपत्ति उत्पन्न की, और उसके साथ आया स्वामित्व का विचार। पुरुषों ने श्रम और निर्णय का अधिकार दोनों अपने हाथ में ले लिए। संगठित धर्म ने इसी शक्ति-संरचना को अपने सिद्धांतों में उतार लिया।

स्त्री की देह एक ओर आवश्यक थी, दूसरी ओर भय का कारण भी। उसकी मातृत्व क्षमता से खेतों में काम करने वाले और अधिक हाथ मिलते थे, इसलिए उसकी देह पर नियंत्रण आवश्यक माना गया। साथ ही, स्त्री की उपस्थिति पुरुषों के भीतर एक ऐसी कामना जगाती थी जिसे वे समझ नहीं पाते थे, और जो भीतर हलचल मचाए और समझ में न आए, वह डर का रूप ले लेता है। उसी डर ने पुरुषों में नियंत्रण की चाहत को जन्म दिया।

---विज्ञापन---

मनुस्मृति से मेडुसा तक: स्त्री को पापी दिखाने वाली कहानियां

मनुस्मृति जैसे ग्रंथों में यह व्यवस्था दी गई कि स्त्री को जीवनभर पुरुष की अधीनता में रहना चाहिए। विधवा-विवाह वर्जित किया गया, यौनिकता पर पहरा लगाया गया। बौद्ध, कन्फ्यूशियन और जैन परंपराओं में भी यही क्रम दिखता है। स्त्रियाँ धार्मिक संघों में पुरुषों की निगरानी में प्रवेश कर सकती थीं, और दिगंबर जैनों के अनुसार मुक्ति केवल पुरुष शरीर में जन्म लेने पर ही संभव थी।

पश्चिमी परंपराओं में भी यही प्रवृत्ति दिखती है। बाइबिल में ईव को आदम को बहकाने वाली और सम्पूर्ण मानवता के पतन का जड़ माना गया, जिससे उसे प्रसव पीड़ा और पुरुष की अधीनता का श्राप मिला। ग्रीक मिथकों में, पेंडोरा को सभी मानवीय दुख और आपदाओं का जनक माना गया। यहूदी परंपरा में लिलिथ आदम की पहली पत्नी थी, जिसने बराबरी की माँग की, और इस कारण उसे शिशुहत्या और राक्षसी प्रवृत्ति का प्रतीक बना दिया गया।

---विज्ञापन---

रामायण में अहल्या की कथा दिखाती है कि जब स्त्री को छलपूर्वक ठगा गया, तब भी दोष उसी को दिया गया, पुरुष को नहीं। जिस संस्कृति ने गार्गी और मैत्रेयी जैसी स्त्रियों को स्थान दिया, भयभीत होने पर उसी संस्कृति ने अहल्या को मौन कर दिया। ज्ञान पर संदेह किया गया, और श्रद्धा को नियंत्रण में बदल दिया गया।

वेदांत में स्त्रियों का स्थान

ऐसा नहीं था कि स्त्री को हमेशा देह समझा गया हो। वेदांत के ऐतिहासिक प्रसंगों में स्त्रियों को शरीर नहीं, बल्कि ऋषियों की उपाधि दी गई है। गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, घोषा: इन सभी ने अहम और

---विज्ञापन---

अस्तित्व पर गंभीर मंथन किया। इनके गहरे ज्ञान से प्रभावित हो पुरुष विद्वान भी इनके पास उत्तर जानने आते थे।

यह उदाहरण दर्शाता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल स्वर यही कहता है कि सत्य की खोज में लिंग कोई बाधा नहीं है। पर जब धर्म सत्ता बन गया और समाज को नियंत्रित करने के प्रयास तेज़ हुए, तब स्त्री को शरीर में बाँध दिया गया और उस पर शुचिता, कुल और आज्ञाकारिता के नियम थोप दिए गए।

---विज्ञापन---

स्त्री का जीवन: आरंभ से तयशुदा

आज भी भारत के गाँवों और कस्बों में एक लड़की के जन्म लेते ही उसका जीवन लगभग तय कर दिया जाता है। उसकी शिक्षा, अवसर और सीमाएँ उसके लिंग के आधार पर निर्धारित होती हैं। बचपन से ही वह अपने शरीर के प्रति सतर्क रहती है, बार-बार दुपट्टा ठीक करती है, नज़रों से बचती है, यह उसी भीतर बनते पिंजरे की शुरुआत है।

जैसे-जैसे वह बड़ी होती है, उसका जीवन वैसा आकार लेता है जिसे उसने खुद नहीं चुना। उसे “पराया धन” कहा जाता है। विवाह, शिक्षा, भविष्य: लगभग सब किसी और के निर्णय से तय होते हैं। उसके लिए अपने मन-मुताबिक निर्णय लेने जैसे कोई विकल्प ही न हो। जिस मन की ज़मीन ही किसी और ने तय की हो, वह कैसे गहराई पकड़ सकता है?

---विज्ञापन---

बचपन से ही लड़कों और लड़कियों को अलग रखा जाता है। मैत्री की संभावना न्यूनतम कर दी जाती है। साधारण बातचीत भी अपराधबोध, डर और वासना से भर जाती है। जितना समाज वासना को दबाने का प्रयास करता है, वासना उतनी ही बढ़ती है। स्त्री को रहस्य और पर्दे में रखकर, समाज ने उससे सहजता छीन ली है, और दोनों लिंगों को एक-दूसरे से चैतन्य जीवों के रूप में मिलने का अवसर नहीं दिया। उन्हें केवल दैहिक भूमिकाओं में सीमित कर दिया गया।

जब स्त्री शरीर मात्र रह जाती है

संस्कृतियाँ और समय बदलते गए, लेकिन यह प्रवृत्ति बनी रही। द्रौपदी का चीरहरण, सीता का वनवास, हेलन पर युद्ध, हर जगह स्त्री की "इज़्ज़त" के नाम पर लड़ाइयाँ लड़ी गईं। पर रक्षा किसकी हो रही थी? चेतना की नहीं, शरीर की। हम द्रौपदी के वेद-ज्ञान या सीता के समझ की बातें शायद ही कभी सुनते हैं। स्त्री का जो अस्तित्व शरीर से आगे था, उसे लगभग भुला दिया गया।

---विज्ञापन---

यही पितृसत्ता का सबसे गहरा छल है: स्त्री को इस भ्रम में रखना कि उसकी सबसे बड़ी पूँजी उसका शरीर है। पिता अपनी बेटी को पढ़ाई से वंचित कर सकता है, लेकिन उसकी "पवित्रता" की रखवाली करता है। समाज ने ऐसी गहरी मानसिक आदत डाल दी है कि स्त्री को सबसे पहले देह के रूप में, एक यौन वस्तु के रूप में देखा जाए, बाकी सब कुछ उसके बाद आता है।

स्त्री पर आघात हो, और दोष उसी पर लगे

अगर कोई पुरुष बलात्कार करता है, तो समाज उसकी प्रतिष्ठा नहीं छीनता। लेकिन अगर स्त्री पीड़िता हो, तो वही समाज कहता है कि अब वह अपवित्र हो गई। जब किसी स्त्री के शरीर पर हमला होता है, तो उसकी गरिमा उसके शरीर से क्यों जोड़ दी जाती है? और वह भी केवल उसके यौन अंगों से? यही सोच है जो अपराध को छुपा लेती है, क्योंकि स्त्री को सिखाया गया है कि उसका मूल्य उसके शरीर से तय होता है, और इसलिए वह चुप रहती है।

---विज्ञापन---

अगर कोई आकाश पर थूक दे, तो क्या आकाश कुछ खोता है? उसी तरह, जब किसी स्त्री को नुकसान पहुँचाया जाता है, तो उसकी गरिमा नहीं जाती। बचपन से स्त्रियों को एक ही पाठ पढ़ाया जाता है: "तुम्हारी कीमत तुम्हारी पवित्रता में है। खुद को उसी के लिए बचाकर रखो जिसे समाज स्वीकार करता है।" यही वह सोच है जो प्रेम को संबंधों से बाहर निकाल देती है। विवाह से पहले या बाद में होने वाला यौन संबंध दो स्वतंत्र चेतनाओं का मिलन नहीं रह जाता, बल्कि समाज के बनाए नियमों के आधार पर तय एक व्यवहार बन जाता है।

वेदांत की ओर: शरीर और लिंग से परे

वेदांत कोई अमूर्त कल्पना नहीं है। यह उस गहरी मानसिकता को चुनौती देता है जिसने स्त्रियों को आज्ञाकारिता में पुण्य और नियंत्रण में पवित्रता दिखाना सिखाया। पुरुष और स्त्री दोनों ही उन पिंजरों में पले हैं जिन्हें लिंग आधारित भूमिकाओं ने गढ़ा है। केवल सामाजिक और कानूनी समानता पर्याप्त नहीं है। जब तक हम स्वयं को प्राथमिक रूप से दैहिक मानते रहेंगे, तब तक हमारे संबंध भी केवल शारीरिक और शोषण पर आधारित रहेंगे।

---विज्ञापन---

परिवर्तन की शुरुआत एक ही प्रश्न से होती है: "मैं कौन हूँ?" जिस दिन स्त्री इस प्रश्न को केंद्र पर रखकर जीने लगती है, वह देह की पहचान से ऊपर उठने लगती है और चेतना की मुक्ति की ओर बढ़ने लगती है। फिर स्त्री की मुक्ति के साथ ही समाज का स्वरूप भी बदलने लगता है।

आचार्य प्रशांत एक वेदान्त मर्मज्ञ और दार्शनिक हैं, तथा प्रशांतअद्वैत फाउंडेशन के संस्थापक हैं। उन्होंने अनेक पुस्तकों की रचना की है और उन्हें विभिन्न सम्मानों से सम्मानित किया गया है, जिनमें Most Influential Vegan Award (PETA), OCND Award (IIT Delhi Alumni Association), और Most Impactful Environmentalist Award (Green Society of India) शामिल हैं।